Volume-4, No. II, Aug-2017, pp.Hin.-09-12

भूमण्डलीकरण के युग में मानव संसाधन विकास हेतु शिक्षा–जगत की वर्तमान चुनौतियाँ

डॉ0 संजय कुमार त्यागी, प्राचार्य
विवेक कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन,
बिजनौर उत्तर–प्रदेश भारत।

उदारीकरण का तात्पर्य उदार अर्थव्यवस्था से लिया जाता है। तकनीकी ज्ञान, पूंजी तथा निर्मित उत्पाद का निर्बाध व्यापार होना इसका लक्ष्य है। निजीकरण उत्पादन, वितरण तथा विनियम के साधनों पर सार्वजनिक के स्थान पर निजी नियन्त्रण का होना है। पिछले दो दशकों में इन प्रक्रियाओं ने विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों के सम्बन्धों के क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिये हैं। बहुराष्ट्रीय निगमों ने अर्वविकसित राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण स्थापित कर लिया है। इनके पास पर्याप्त पूंजी, तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षित कर्मचारियों का समूह होता है। मात्र सात राष्ट्रों के 900 बड़े बहुराष्ट्रीय निगम आज सम्पूर्ण विश्व के 50 प्रतिशत उत्पादन पर अपना नियंत्रण रखते हैं। श्रम, पूंजी, तकनीकी एवं सूचनाओं का स्वतंत्र प्रवाह जिसने विश्व को एक गांव में बदल दिया है भूमण्डलीकरण कहलाता है। समाज ने वैश्विक परिवेश को जानना समझना आरम्भ किया। तद्नुरूप संसाधनों की मांग बढ़ी, उत्पादन की गुणवत्ता को खुले बाजार में चुनौती दी जाने लगी है। तब शिक्षा जो समाज को गतिशीलता देती है उसके लिए नवीन चुनौतियां हैं। सामान्य जीवन की समस्त अवधारणाओं को आज वैश्विक जगत के अनुरूप गुणवत्तापूर्ण बनाना ही शिक्षा का वर्तमान उद्देश्य है। समाज और राष्ट्र की अवधारणाओं के विस्तारीकरण–अन्तर्राष्ट्रीयकरण हो जाने से आज शिक्षा को 'विश्व नागरिक' के निर्माण की चुनौती है। अध्यापक शिक्षा का आयाम भी नवीन प्रवृत्तियों और चुनौतियों के अनुरूप बढ़ा है। हमें ऐसी प्रशिक्षण नीतियों, प्रविधियों और प्रवृत्तियों की आवश्यकता आ पड़ी है जो अपने उत्पादन (प्रशिक्षु अध्यापक) को प्रगतिशील गुणवत्तापूर्ण बना सके। वैश्विक दृष्टिकोण, उदार मस्तिष्क, तकनीकी कुशलता, लोचयुक्त विचार और सतत प्रगतिशीलतायुक्त शिक्षकों को उत्पादित करना, अध्यापकों की आपूर्ति करना, ही शिक्षक–प्रशिक्षण की सबसे बड़ी चुनौती है।
भारतीय दर्शन में 'वसुदैव कुटुम्बकम' की अवधारणाएं इस राष्ट्र की धरोहर है। तब हमें उच्च मानसिकता के साथ वैश्विक आवश्यकताओं को समझते हुए ऐसे अध्यापकों का निर्माण करना चाहिए जो वैश्वीकरण के प्रत्येक पहलु के लिए अपने विद्यालयों को कार्यशालाओं में बदल सके। साथ ही विश्व की हिंसक तथा धनलौलुप संस्कृतियों के आक्रमण से रक्षा के लिए जाग्रत हो। शिक्षक–प्रशिक्षण इसका सशक्त माध्यम हो सकता है।

पिछली शताब्दी के अन्तिम दशकों में विश्व के उत्तर पश्चिमी राष्ट्रों ने पुनः अपने विस्तार की पृष्ठभूमि तैयार की। यह तकनीकी ज्ञान और आर्थिक सहायता के छदम् मुखौटे के रूप में विकासशील एवं नव–स्वतंत्रता प्राप्त अर्द्धविकसित राष्ट्रों के उत्पादन, व्यापार एवं विपणन पर एकाधिकार प्राप्त करने के रूप में प्रत्यक्ष होना आरम्भ हुआ। यह विचार पश्चिम के बौद्धिकों व राजनीतिज्ञों को वहां के उत्पाद निगमों ने दिया। इन उत्पाद निगमों के प्रतिनिधियों ने युरोपीय–अमेरिकन राजनीति को पोषण देकर स्थापित संवैधानिक व्यवस्था को अपने अधिकार में किया और व्यापार, आयात–निर्यात, सूचना पारगमन के उपबन्धों को अपने अनुकूल लचीला बनाना आरम्भ किया। परिणामतः राष्ट्रों में राजनीतिक उथल–पुथल हुई जो शीघ्र ही ''अधिक लाभांश'' की मानसिकता के परिवर्तन के कारण संक्रामक रूप से विश्व–भर में विस्तृत हो गयी। बहुराष्ट्रीय निगमों की सुसंगठिता, सूचना क्रान्ति, सार्वजनिक व्यवस्थाओं का निजीकरण, मानव की पूंजी रूप में स्थापना आदि तथ्यों ने जिस विश्व संस्कृति को जन्म दिया वह सामान्यतः एल0पी0जी0 युग अर्थात उदारीकरण, निजीकरण तथा भूमण्डलीकरण का युग कहलाता है।

इस युग में उत्पाद की गुणवत्ता तथा बाजार की मांग एवं पूर्ति जीवन की मांग है। संसाधनों के

विकास और उनकी गुणवत्ता में उत्तरोत्तर वृद्धि करना ही वर्तमान की चुनौती है। 'ज्ञान, ज्ञान के लिये है' आज केवल भावनात्मक नारा है। अब, ज्ञान तथा वित्त का सम्बन्ध घनिष्ठ हो गया है। शिक्षा वित्त पर निर्भर हो गयी है। वित्त आर्थिक विकास को प्रभावित करता है, और आर्थिक विकास मानवीय संसाधनों की निपुणता पर निर्भर करता है। आज मानव संसाधन राष्ट्रीय पूंजी है। 'निपुणता प्राप्त कौशलयुक्त व्यक्ति' ही मानव संसाधन है। अतः वर्तमान समय में शिक्षा का चुनौतिपूर्ण दायित्व दक्षतायुक्त ऐसे मानव संसाधन का विकास करना है जो वैश्विक परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र की समृद्धि को सुनिश्चित कर सकें।

उदारीकरण का तात्पर्य एक ऐसी व्यापक एवं लचीली अर्थ–व्यवस्था से है जिसमें पूंजी, उत्पाद और तकनीकी ज्ञान का सहज रूप से आदान–प्रदान हो सके। व्यापार हेतु कानूनी प्रतिबन्धों में लचीलापन लाते हुए आयात–निर्यात को सुगम बनाना, लाइसेन्स राज्य, नियंत्रण कोटा, प्रशुल्क आदि प्रतिरोधों का समाप्त कर पूंजी और उत्पाद के बाधा रहित आवागमन ही उदारीकरण का आधार है।

निजीकरण, उत्पादन, विपणन, वितरण तथा विनिमय के साधनों पर सार्वजनिक के स्थान पर निजी नियंत्रण का होना है। उत्पादन और आय के साधनों और स्रोतों का नियंत्रक ही उसके विपणन और वितरण सम्बन्धी नियमों का नियामक होता है और इसमें अपना उच्च लाभांश तय करता है। निजीकरण को सामान्यतः बहुराष्ट्रीय निगमों का पोषक एवं प्रायोजक कहा जा सकता है।

उदारीकरण एवं निजीकरण ने विकसित एवं विकासशील राष्ट्रों के सम्बन्धों में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिये हैं। बहुराष्ट्रीय निगमों ने अर्द्धविकसित राष्ट्रों की अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण कर लिया है। बहुराष्ट्रीय निगमों के पास पर्याप्त पूंजी, तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षित कर्मचारियों का समूह है जो आर्थिक सहायता, संसाधनों के प्रवाह आकर्षक विज्ञापन और लोभ की प्रवृत्ति के सहारे किसी भी राष्ट्र के बाजार, उसके उत्पादन और वितरण पर अपना अधिकार जमाते जा रहे हैं। अमेरिका ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान तथा कनाड़ा इन सात राष्ट्रों के 900 बड़े बहुराष्ट्रीय निगमों ने समस्त विश्व के 50 प्रतिशत से भी अधिक उत्पादन एवं वितरण पर कब्जा कर लिया है।

भूमण्डलीकरण, उदारीकरण और निजीकरण के परिणाम स्वरूप उत्पन्न अवधारणा है। एकरूपता एवं समरूपता की वह प्रक्रिया जिसमें सम्पूर्ण विश्व एक इकाई हो जाता है। आज श्रम, पूंजी तकनीकी ज्ञान तथा सूचनाओं के निर्बाध प्रवाह ने संसार को ''वैश्विक गांव'' में बदले दिया है। राष्ट्रों की राजनीतिक सीमाओं के आर–पार आर्थिक लेन देन की प्रक्रियाओं और उनके प्रबन्धन का प्रवाह ही भूमण्डलीकरण है। मनोरंजन, संवाद, सांस्कृतिक आदान–प्रदान, खेल, विज्ञान, तथा शिक्षा आदि सामाजिक जीवन का प्रत्येक पहलु इसे प्रभावित हुआ है और इनका विस्तार पटल बढ़ा है। भूमण्डलीकरण से तात्पर्य है– उत्मुक्त बाजार एवं प्रतिस्पर्धा। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं का विश्व–अर्थव्यवस्था के साथ समायोजन, राष्ट्रीय बाजारों का अन्तर्राष्ट्रीयकरण, वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण की प्रक्रिया इसका मूल आधार है। आज समाज का प्रत्येक अंग वैश्विक जगत को जानने–समझने और उससे सामंजस्य बनाने के उपाय कर रहा है। परिणाम स्वरूप व्यापक परिवर्तन परिलक्षित होने लगे हैं। तदनुसार संसाधनों की मांग बढ़ी है। उत्पादन की गुणवत्ता को खुले बाजार की खुली चुनौती मिली है।

शिक्षा दर्शन का, ज्ञान का क्रियात्मक पहलु है, जो अपने उत्पाद के रूप में मानव कौशल को ढालती है– निर्मित करती है। उसके सम्मुख भी गुणवत्तापूर्ण उत्पाद की चुनौती आ खड़ी हुई है क्योंकि आज मानव एक पूंजी है। अतः उसका निवेश भी लाभ प्राप्ति का साधन होना चाहिए। इसलिए उच्च गुणवत्तापूर्ण कुशल व्यक्तियों का उत्पादन ही आज राष्ट्रीय समृद्धि एवं वैश्विक हित के लिए आवश्यक है। वर्तमान शिक्षा में व्यवस्था जहाँ नामांकन बढ़ता जा रहा है, विश्वविद्यालय, महाविद्यालय और प्रशिक्षण संस्थान खुलते जा रहे हैं फिर भी राष्ट्रीय स्तर पर गुणवत्ता पूर्ण कौशलता का अभाव ही है जो नवसृजन की प्रतिभा और क्षमता के साथ राष्ट्रीय पूंजी के रूप में विश्व के सामने खड़े हो सकें।

शिक्षा, जो समाज को गतिशीलता देती है उसके लिए चुनौतियां आ खड़ी हुई हैं। सामान्य जीवन की समस्त अवधारणाओं को वैश्विक जगत के अनुरूप गुणवत्तापूर्ण बनाना आज शिक्षा का उद्देश्य

है। एक राष्ट्र के रूप में कल तक हम अपने समाज, अपने संविधान तक सीमित थे किन्तु आज वैश्वीकरण के इस दौर में समाज एवं राष्ट्रीय अवधारणाओं के विस्तारीकरण हो जाने के कारण हम समस्त विश्व के प्रति उत्तरदायी हैं। शिक्षा को आज ''विश्व–नागरिक के निर्माण'' की चुनौती है। राजनीति और अर्थशास्त्र के विद्धतजन अब ''विश्व राज्य सिद्धान्त'' की चर्चा करने लगे हैं। जिसको मूर्त रूप में लाना वैश्विक स्तर पर शिक्षण जगत का ही दायित्व है।

शिक्षा का आयाम बढ़ा है। शिक्षा का अध्यापक शिक्षा से जुड़ा पहलु कहीं ज्यादा प्रासंगिक हो उठा है। अध्यापक शिक्षा की दिशा और दशा को शिक्षा जगत के नवीन आयामों के अनुसार बड़ी चुनौतियों के अनुरूप अपने को ढालना पड़ेगा। वैश्वीकरण के इस दौर में ऐसी प्रशिक्षण नीतियां, प्रविधियां और प्रवृत्तियां अपनानी पड़ेंगी जो अपने उत्पाद की सर्वोच्च गुणवत्ता सुनिश्चित कर सकें। वर्तमान समय में मानव संसाधन के विकास, संरक्षण और गुणवत्ता उन्नयन की आवश्यकता है। प्रशिक्षु अध्यापक को इतना गुणवत्तापूर्ण बनाना हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि वह स्वयं में किये गये निवेश की गुणोत्तर अभिवृद्धि को प्राप्त हो, साथ ही वह इस कला में निपुण किया जाये कि आने वाले कल के लिये विश्व नागरिकों का निर्माण कर सके। मानव ऊर्जा, शान्ति, समय, श्रम एवं धन के निवेश को उचित रूप में ढालकर निष्पत्तियां बढ़ा सकें।

श्रम, समय, पूंजी और ज्ञान के निवेश एवं उसकी प्राप्तियों के चक्रव्यूह में मानवीय संवेदना तथा राष्ट्रीय अस्मिता का अभिवर्द्धन हमारी कसौटी है। यंत्र और मानव, उत्पाद और मानवीय कुशलता को एक ही प्रकार से नहीं देखा जा सकता। तीव्रतम गतिशील विश्व में भी शांति एवं सोम्यता बनी रहे यह भी शिक्षा की अनिवार्यता है। मानव का वैश्विक दृष्टिकोण, उदार मस्तिष्क, तकनीकी कुशलता, लौचयुक्त विचार और सतत प्रगतिशीलता आज के दौर की आवश्यकता है। इन गुणों से युक्त व्यक्तियों का निर्माण और अपूर्ति करना विद्यालयों को चुनौती है। ऐसे शिक्षक जो इन विश्व नागरिकों को निर्माण में सक्षम हो उनको प्रशिक्षित करना अध्यापक–प्रशिक्षण हेतु बड़ी चुनौती है।

भारतीय दर्शन, इतिहास और जीवन शैली में वैश्वीकरण कोई नवीन अवधारणा नहीं है। वैदिक काल से ही ''यह अखिल विश्व मेरा है, और मैं अखिल विश्व का हूँ'' तथा 'वासुदैव कुटम्बकम्' की अवधारणाएं इस राष्ट्र की धरोहर हैं। तब हमें उसी उच्च सांस्कृतिक विरासत में मिली मानसिकता के साथ ही भूमण्डलीकरण को अपनाना है। ऐसा करते समय भी हमारे लिए मानवीय मूल्यों का संरक्षण सर्वोपरि होना चाहिए। भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता भ्रातृत्व व उदारशीलता को सत्ता एवं धन लोलुपों तथा हिंसक आतंक से सुरक्षित करना है। सांस्कृतिक संक्रमण मूल्यों का क्षरण न कर सके। इसके लिए हमें शिक्षातंत्र को अधिक मानवीय, अधिक संवेदनशील बनाना पड़ेगा।

बहुराष्ट्रीय निगमों और सम्पन्न राष्ट्रों की प्राविधिक पराधीनता को अस्वीकार करते हुए नवीन प्रौद्योगिकी उत्पन्न करनी पड़ेगी। सरकारी तौर पर कथित 'समान साझेदारी' तथा अनुदान की नकाब उतार फैंकनी है। आर्थिक सहायता, सामरिक साझा, शस्त्र तकनीकी का निर्यात, व्यापार और उत्पादन के उपकरणों के साथ नव उपनिवेशवाद का जिन्न जो पूंजीवादी राष्ट्रों और बहुराष्ट्रीय निगमों से निकला है उसे शिक्षा का आर्थिक पक्ष दृढ़ करके, क्षमता, निपुणता योग्यता की वृद्धि करके अपने वश में करना है और उससे अपनी सेवा करानी है।

भारत में आज लगभग 2000 विदेशी निगम अपना उत्पाद बेचते हैं, विदेशी ऋण बढ़कर खरबों डालर पहुंच गया है ऐसे में हमारी शिक्षा को साम्राज्यवादी कर्ज, सामरिक आत्म निर्भरता, और सांस्कृतिक संरक्षण के उपाय खोजने पड़ेंगे। तभी हम अपना अस्तित्व बचा पायेंगे। आज राष्ट्र की मुख्य आवश्यकताएं खाद्य उत्पादन में आत्मनिर्भरता, आर्थिक रूप से ऋण मुक्ति, सामाजिक–राष्ट्रीय सामंजस्य, नैतिक अनुशासन, मानवीय मूल्यों की स्थापना, विश्व बन्धुत्व के भाव की दृढ़ता है।

इतिहास से सीखते हुए और भविष्य को आशान्वित–अनुमानित करते हुए भूमण्डलीकरण अपनाया जाये। शिक्षा एवं शिक्षक दोनों का ऐसा प्रयास होना चाहिए। हम संविकास और सामंजस्य की अवधारणा से परिपूर्ण राष्ट्र है। अतः आत्माभिमान और सजग राष्ट्र प्रहरी की भांति हमें भूमण्डलीकरण का स्वागत करना चाहिए तथा उसके अनुरूप अपनी शिक्षा व्यवस्था में उपयुक्त उन्नयन करना चाहिए।

संदर्भ सूचीः

- चौबे, सरयूप्रसाद (2003): शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार; विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा–2
- माथुर, एस0एस0 (1997): शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार; विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2
- एन0सी0टी0ई0 (2001): अध्यापक शिक्षा में नीतिगत परिदृश्य– विवेचन व प्रलेखन; राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद
- रिपोर्ट ऑफ द करीक्यूलम डवलपमेन्ट सेंटर इन एजुकेशन (1990), वोल्यूम–प्प (बी0एड0 कोर्स), नई दिल्ली
- राजपूत, जगमोहन सिंह (2002): पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयाम, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली
- मालवीय, राजीव (2006): शिक्षा के नूतन आयाम; शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
- सिंह, सत्यदेव (2008): भारतीय समाज एवं शिक्षाः आर0लाल बुक डिपो, मेरठ
- वर्मा, अशोक कुमार (2005): नीतिशास्त्र की रूपरेखा; मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली
- अग्रवाल, जे0सी0 (2004): भारतीय शिक्षा पद्धतिः संरचना और समस्याएं; आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली
- मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ (2002): समकालीन उच्चतर समाजशास्त्रीय सिद्धान्त; विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली
- सक्सैना, निर्मल (2006): शिक्षा एवं उदीयमान भारतीय समाज; मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर
- शुक्ला, सी0एस0 (2005): भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास; इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
- शर्मा, सुरेन्द्र कुमार (2006): आधुनिक भारतीय समाज में शिक्षा; डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
- शर्मा, आर0ए0 (2003): अध्यापक शिक्षा, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ
- सिंह, जे0पी0 (2003): सामाजिक परिवर्तन : स्वरूप एवं सिद्धान्त; प्रेंटिस हाल ऑफ इण्डिया प्रा0लि0, नई दिल्ली
- मुकर्जी, रवीन्द्रनाथ एवं अग्रवाल, भारत (2007): सामाजिक नियंत्रण और सामाजिक परिवर्तन, विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली
- सिंह, वीरकेश्वर प्रसाद (2004): आधुनिक राजनीतिक सिद्धान्त; ज्ञानदा प्रकाशन, नई दिल्ली